7. पुलकेशी द्वितीय का अयहोल लेख
(Aihol Inscription of Pulkeshi II)

स्थान : अयहोल, जिला—बीजापुर

भाषा : संस्कृत

लिपि : दक्षिणी ब्राह्मी

काल : वि० सं० 556 (= 499 ई०)

विषय : पुलकेशिन द्वितीय तक चालुक्य शासकों का वर्णन, पुलकेशिन द्वितीय की कीर्ति का उल्लेख।

मूल-पाट

जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो वीतजरामरणजन्मनो यस्य।
ज्ञानसमुद्रान्तर्ग्गतमखिलंञ्जगन्तर्रपमिव ॥ 1 ॥

तदनु चिरमपरिमेय श्चलुक्य कुलविपुलनिधिर्ज्जयति।
पृथिवी मौलिललाम्नां यः ⌣ प्रभवः ⌣ पुरुषरत्नाम् ॥ 2 ॥

शूरे विदुषि च विभजन्दानंमानंञ्च युगपदेकत्र।
अविहितयाथासंख्योजयति च सत्याश्रयस्सुचिरम् ॥ 3 ॥

पृथिवीवल्लभशब्दो येषामन्वर्त्थतांच्चिरञ्जातः।
तद्वंशेषु जिगीषुषु तेषु बहुष्वप्यतीतेषु ॥ 4 ॥

नाना हेतिशताभिधातपतितभ्रान्ताश्वपत्तिद्विपे
नृत्यद्भीमकबन्धखड्गकिरणज्वालासहस्त्ररणे।
लक्ष्मीर्भावितचापलपि च कृता शौर्य्येण येनात्मसा—
द्राजासीज्जयसिंहवल्लभ इति ख्यातश्चलुक्यान्वयः ॥ 5 ॥

तदात्मजोभूद्रणरागनामा
दिव्यानुभावो जगदेकनाथः।
अमानुषत्वं किल यस्य लोकाः
स्सुप्तस्य जानाति वपुः प्रकर्षात् ॥ 6 ॥

तस्याभवत्तनूजः पोलेकेशी यः श्रितेन्दुकान्तिरिप।
श्रीवल्लभोप्ययासीद्वातापिपुरीवधूवरताम् ॥ 7 ॥

यस्त्रिवर्ग्गपदवीमलं क्षितौ
नानुगन्तुमधुनापि राजकम्।
भूश्व येन हयमेधयाजिना
प्रापितावभृथमज्जना बभौ ॥ 8 ॥

नलमौर्यकदम्बकालरात्रिः—
स्तनयस्तस्य बभूव कीर्तिवर्म्मा।
परदारनिवृत्तचित्तवृत्ते—
रपि धीर्यस्य रिपुश्रीयानुकृष्टा ॥ 9 ॥

रणपराक्कमलब्धजयश्रिया
सपदि येन विरूग्णमशेषतः।
नृपतिगन्धगजेन महौजसा
पृथुकदम्बकदम्बकदम्बकम्॥ 10॥

तस्मिन्सुरेश्वरविभूतिगताभिलाषे
राजाभवत्तदनुजः किल मङ्गलेशः।
यः पूर्वपश्चिम समुद्र तटोषिताश्च—
सेनारज, पटर्व्विनम्ति दिग्वितानः॥ 11॥

स्फुरन्मयूखैरसिदीपिकाशर्तै—
र्व्युदस्यमातङ्गतमिस्रसञ्चयम्।
अवाप्तवान्यो रणरङ्गमन्दिरे
कटच्छुरिश्रीललनापरिग्रहम्॥ 12॥

पुनरपिचजघृक्षोस्सैन्यमाक्क्रान्तसालम्
रूचिरबहुपताकं रेवतीद्वीपमाशु।
सपदि महदुदन्वत्तीयसंक्क्रान्तबिम्बिम्
वरुणंबलमिवाभूदागतं यस्य वाचा॥ 13॥

तस्याग्रजस्य तनये नहुषानुभावे
लक्ष्म्या किलभिलषिते पोलेकेशिनामम्नि
सासूयमात्मनि भवन्तमतः पितृव्यम्
ज्ञात्त्वापरुद्धचरितव्यवसायबुद्धौ॥ 14॥

स यदुपचित मन्त्रोत्साहशक्तिप्रयोग—
क्षपितवलविशेषो मङ्गलेशःसमन्तात्
स्वतनयगतराज्यारम्भयत्नेन साद्धं
निजमतनु च राज्यंञ्जीवितंञ्चोज्झति स्म॥ 15॥

तावत्तच्छत्रभङ्गो जगदखिलमरात्यन्धकोरापरुद्धं
यस्यासह्यप्रतापद्युतिततिभिरिवाक्क्रान्तमासीत्प्रभातम्।
नृत्यद्विद्युत्पताकैः प्रजविनि मरूति क्षुण्णपर्यान्तभागै—
र्ग्गर्जद्भिर्व्वारिवाहैरलिकुलमलिनं व्योम यातं कदा वा॥ 16॥

लब्धवा कालं भृवमुपगते जेतुमाप्पायिकाख्ये
गोविन्दे च द्विरदनिकरैरुत्तरांम्भैमरथ्याः।
यस्यानीकैर्युधि भथरसज्ञात्वमेकः प्रयात—
स्तत्रावाप्तंफलमुपकृतस्यापरेणापि सद्यः॥ 17॥

वरदातुङ्गतरङ्गरङ्गविलसद्रस्धंसावलीमेखलां
वनवासीमवमृतःसुरपुरप्रस्पर्धिनीं सम्पदा।
महता यस्य बलार्ण्णवेन परितःसञ्छादितोर्वीतलं
स्थलदुर्गञ्जलदुर्ग्गतामिव गतं तत्तत्क्षणे पश्यताम्॥ 18॥

गङ्गालुपेन्द्रा व्यसनानि सप्त
हित्वपुरोपार्जितशम्पदोऽ पि।
यस्यान्नुभावोपनताःसदास-
न्नासन्नसेवामृतपानशौण्डः ॥ 19॥
कोङ्कणेषु यदादिष्ट चण्डदण्डाम्बुवीचिभिः
उदस्तास्तरसा मौर्यपल्वलाम्बुसमृद्धयः ॥ 20॥
अपरजलधेर्लक्ष्मीं यस्मिन्पुरीम्पुरभित्प्रभे
मदगजघटाकारैनावां शतैर्रवमन्दति।
जलदपटलानीकाकीर्णन्नवोत्पलमेचक
जलनिधिरिव ब्योम व्योन्नस्सभोभवदम्बुधिः ॥ 21॥
प्रतापापनता यस्य लाटमालवगुर्जराः।
दण्डोपनतसमन्तचर्य्या चार्या इवाभवन् ॥ 22॥
अपरिमितविभूतिस्फीतसामन्तसेना—
मुकुटमणिमयूखाक्क्रान्तपादारविन्दः ॥
युधि पतितगजेद्रानीकबीभत्सभूतो
भयविगलितहर्षो येन चाकारि हर्षः ॥ 23॥
भुवमुरुभिरनीकैश्शासतौ यस्य रेवा—
विविधपुलिनशोभावन्ध्य विन्ध्योपकण्ठः।
अधिकतरमराजत्स्वेन तजोमहिम्ना
शिखरिभिरिभवर्ज्यो वर्ष्मणां स्पर्द्धयेव ॥ 24॥
विधिवदुपचिताभिश्शक्तिभिश्शक्रकल्प—
स्तिसृभिरपि गुणौधैस्वैश्च माहाकुलाद्यैः
अगमदधिपतित्वं यो महाराष्ट्रकाणां
नवनवतिसहस्रग्रामभाजां त्रयाणाम् ॥ 25॥
गृहिणां स्वस्वगुणैस्त्रिवर्गतुङ्गा।
विहितान्यक्षितिपालमानभङ्गाः।
अभवन्नुपजातभीतिलिङ्गा।
यदनीकेन सकोसलाः कलिङ्गाः ॥ 26॥
पिष्टं पिष्टपुरं येन जातं दुर्ग्गमदुर्ग्गगम्—
चित्रं यस्य कलेर्वृत्तम् जातं दुर्ग्गमदुर्ग्गगमम् ॥ 27॥
सन्नद्धवारणघटास्थगितान्तरालं
नानायुधक्षतनरक्षतजाङ्गरागम्।
आसीज्जलं यदवमर्द्दतमभ्रगर्भ
कौनालमम्बरमिवोर्ज्जित सान्ध्यरागम् ॥ 28॥

उद्धूतामलचामरध्वज शतच्छत्रान्धकारैर्बलैः
शौर्य्योत्साहरसोद्धतारिमथनैर्मौलादिभिःष्षडविधैः
आक्रान्तात्मबलोन्नतिम्बलरजःसञ्छन्नस्काञ्चीपुर—
प्राकारान्तरितप्रतापकरोद्यः पल्लवानांम्पतिम्॥ 29॥

कावेरी हतशफरीविलोलनेत्रा
चोलानां सपदि जयोद्यतस्य यस्य
प्रश्योतन्मदगजसेतुरूद्धनीरा
संस्पर्शं परिहरति स्म रत्नराशेः॥ 30॥

चोलकेरलपाण्ड्यानाम् योभूत्तत्र महर्द्धये।
पल्लवानीकनीहार तुहिनेतरर्दधितिः॥ 31॥

उत्साहप्रभुमन्त्रशक्तिसहिते यस्मिन्समस्ता दिशो
जित्वा भूमिपतीन्विसृज्य महितानाराद्धय देवद्विजान्।
वातापीन्नगरीप्रविश्य नगरीमेकामिवोर्म्मिमांम्
चञ्चन्नीरधिनीलनीरपरिरखां सत्याश्रये शासति॥ 32॥

त्रिशंत्सु त्रिसहस्रेषु भारतादाहवादितः।
सप्ताब्दशतयुक्तेषु गतेष्वब्देषु पञ्चसु॥ 33॥

पञ्चाशत्सु कलौ काले षट्सु पञ्चशतासु च।
समासु समतीतासु शकानामपि भूभुजाम॥ 34॥

तस्याम्बुधित्रयनिवारितशासनस्य
सत्याश्रयस्य परमाप्तवता प्रसादम्
शैलं जिनेन्द्र भवनं। भवनम्महिम्नां
निर्मापितं मतिमता रविकीर्त्तिनेदम्॥ 35॥

प्रशस्तेर्व्वसते, श्चास्या जिनस्य त्रिजगद्गुरोः।
× कर्ताकारयिता चापि रविकीर्तिः × कृति स्वयम्॥ 36॥

येनायोजि नवेश्मस्थिरमर्त्थविधौ विवेकिना जिनवेश्म।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रित—
कालीदासभारविकीर्तिः॥ 37॥

मूल वल्लिवेल्मल्तिकवाडमच्चनूर्गाङ्गिवूर्पुलिगिरे
गण्डवग्राम मा इति अस्य भुक्तिः। गिरि (रे) स्त
टात्पश्चिमाभिगत निमूवारिय्यवत् महापथान्तपुरस्य
सि (सी) मा उत्तरतः दक्षिणतो

हिन्दी अर्थान्तर

1. भगवान विष्णु की जय हो, जो वृद्धावस्था, मृत्यु और जन्म की शंका से मुक्त हैं। समुद्र में निहित टापू की तरह उनके ज्ञान रूपी समुद्र में सम्पूर्ण संसार टापू की तरह समाहित है।

2. इनके बाद का समुद्र रूपी विशाल चालुक्य वंश स्थायी तथा असीम है। यह कुल रूपी समुद्र पुरुष रत्नों का उद्भव स्थल है जो रत्न पृथ्वी के मस्तक के आभूषण हैं।

3. सत्याश्रय (इस वंश का शासक) चिर विजय हो जो दान और मान के वितरण में वीर और विद्वानों में भेद न कर दोनों में ही दान और मान का समान वितरण करता था।

4. विज के इच्छुक चालुक्य वंश में उत्पन्न पहले के राजाओं के बीच यह 'पृथ्वी बल्लभ' नाम की सार्थकता चिरकाल तक बनाए रखा।

5. जयसिंह बल्लभ इस वंश का राजा हुआ। उसने शस्त्रों के सैकड़ों आघात से भ्रान्त होकर अश्व पंक्ति, पदाति तथा हस्ति सेना आदि के नाचते हुए, मयंक चमचमाती तलवार से युक्त युद्ध में व्याप्त चंचला लक्ष्मी को अपने शौर्य से जीत लिया था।

6. रणराज इसका पुत्र था। उसके सोए हुए शरीर की विशालता को देखकर संसार उसे देवता मानता था। वह संसार का स्वामी था।

7. उसका पुत्र पुलकेशी हुआ जो चन्द्र-कान्ति का आश्रय लेकर लक्ष्मीवल्लभ होने पर भी वातापिपुर के श्री कुल-वधू का पद प्राप्त किया था।

8. पुलकेशी जिसके त्रिवर्ग पद को समझने में राजमण्डल समर्थ नहीं हुआ उसने अश्वमेघ यज्ञ किया तथा यज्ञ की समाप्ति के समय स्नान द्वारा उसने पृथ्वी को चमत्कृत कर दिया था।

9. उसका पुत्र कीर्तिवर्मा नल, मौर्य और कदम्ब राजाओं के लिए कालरात्रि था। यद्यपि उसने दूसरों की स्त्री से चित्त हटा लिया था फिर भी राजलक्ष्मी ने उसे आकर्षित किया था।

10. कीर्तिवर्मा ने पराक्रम से विजय लक्ष्मी प्राप्त किया। राजाओं के मदमत्त कुंजर के समान कदम्ब वंश को कदम्ब वृक्ष की तरह उखाड़ दिया था।

11. इन्द्रपद की प्राप्ति की इच्छा वाला कीर्तिवर्मा के मरने पर उसका यह अनुज राजा बना। पूर्वी समुद्र तट से पश्चिमी समुद्र तट तक उसके पड़ाव के घोड़ों की टाप से उड़ी धूल ऐसी फैली जैसे चन्दवा फैला दिया गया हो।

12. उसने शत्रुओं के हाथी रूपी अन्धकार को सैकड़ों तलवार रूपी दीपकों से नष्ट कर 'कटच्छुरी'—कलचूरी—वंश की राजकन्या से युद्ध मण्डप में विवाह किया था।

13. पुनः उसने पताकाओं से युक्त विजय की इच्छा से रेवती द्वीप को चारों ओर से सेनाओं से घेर लिया था। समुद्र में उसके सैन्य मण्डल का प्रतिबिम्ब ऐसा लगता था मानो मंगलेश की आज्ञा पाकर वरुण की सेना ही आ गई हो।

14. कीर्तिवर्मा, जो मंगलेश का बड़ा भाई था उसका लड़का पुलकेशिन राजा बना। वह नहुष की तरह प्रभावशाली तथा लक्ष्मी का प्रियपात्र था। चाचा मंगलेश को अपने प्रति ईर्ष्यालु जानकर, जिसका स्वभाव रोका नहीं जा सकता था, उससे युद्ध हुआ जिसमें मंगलेश मारा गया।

15. पुलकेशिन की बढ़ती मन्त्र शक्ति तथा उत्साह शक्ति से मंगलेश की सम्पूर्ण शक्ति विनष्ट हो गई थी। उसने अपने पुत्र को राज्य दिलाने के प्रयास में अपने राज्य और प्राणों से हाथ धो दिया।

16. मंगलेश के राज्य के अन्त के साथ ही सम्पूर्ण विश्व शत्रुरूपी अन्धकार में विलीन हो गया। किन्तु पुलकेशिन ने अपने पराक्रम से पुनः नया प्रकाश आलोकित किया। अथवा नाचती हुई विद्युत रूपी पताकाओं से युक्त वायु से टूटे हुए किनारों वाले, मेघ गर्जन से युक्त आकाशमण्डल भ्रमरों की कालिमा से जैसे युक्त हो जाता है जबकि वेग से पवन चलता हो।

17. आप्यायिक और गोविन्द नाम के राजाओं ने अपनी हस्ति सेना भीमरथी नामक नदी के उत्तरी तट पर भेजा था जबकि मंगलेश का राज्य समाप्त हो चुका था तथा पुलकेशिन का नवजात राज्य प्रारम्भ हो रहा था। इनमें से एक पुलकेशिन की सेना से भयाक्रान्त होकर भाग गया था तथा दूसरा आत्मसमर्पण का फल प्राप्त कर उससे मैत्री कर लिया।

18. जिस (पुलकेशिन) ने सेना रूपी समुद्रा के द्वारा वनवासी नगरी को चारों ओर से आच्छादित कर लिया है तथा अपनी समृद्धि में इन्द्र को भी लज्जित करने वाला तथा वरदा नदी की उत्तुङ्ग तरंगों की रंगशाला में पलने वाले हंस की अवलि रूपी कर्धनी से घिरी उस नगरी को विध्वंस कर दिया।

19. प्राचीन काल की उपार्जित सम्पत्ति के होने पर भी जिन्होंने सप्त व्यसनों का त्याग कर दिया था, वे 'गङ्ग' और 'आलुप' वंश के राजा पुलकेशिन के प्रभाव से उसके समीप रहकर उसके सेवा रूपी अमृत का पान मस्ती से करते थे।

20. कोंकण प्रदेश मे मौर्यरूपी लघु जलाशय प्रचण्ड सेना रूपी जल राशि के द्वारा बहा दी गई थी।

21. त्रिपुर को मारने वाले भगवान शंकर की आभा वाले पुलकेशिन ने मदमत्त हस्ति सेना की तरह सहस्रों नौकाओं से लक्ष्मी की तरह पश्चिमी समुद्र की नगरी मौर्य-पुरी पर आक्रमण कर दिया। तब सेना की तरह मेघमाला से व्याप्त नव-कुसुमित नील-कमल के समान नीला नभ समुद्र के समान तथा समुद्र आकाश के समान दीखने लगा।

22. जिनके प्रभाव से झुके हुए लाट, मालव और गुर्जर देश के राजा मानो सेना के प्रभाव से झुके हुए सामन्तों की सेवा विधि में निपुण हो गए हों,

23. अपरिमित विभूति से समृद्ध, सामन्त सेना के मुकुटमणि से सुशोभित चरणकमल है जिसका, युद्ध क्षेत्र में हाथियों की सेना के नष्ट होने से वह हर्ष भी पुलकेशिन से भयाक्रान्त होकर हर्षरचित हो गया।

24. पुलकेशिन इस पृथ्वी पर जब अपनी विशाल सेना के साथ शासन कर रहा था तब बालू से परिपूरित शोभा वाले नर्मदा नदी का तटीय भाग और हाथियों से रहित पहाड़ों की भाँति शरीर से प्रतिस्पर्धा रखने वाले विन्ध्याचल पर्वत का पार्शवर्ती भाग अपने तेज से अत्यधिक शोभा युक्त हो गया।

25. पुलकेशिन में मन्त्रशक्ति, उत्साहशक्ति और प्रभुशक्ति का समन्वय था। वह कुलीनता में इन्द्र के समान था। उसका आधिपत्य तीनों महाराष्ट्र प्रदेश के निन्यानवे गाँवों तक था।

26. वह धर्म, अर्थ और काम को पूर्ण करने में गृहस्थोचित तथा सर्वश्रेष्ठ था। कोशल और कलिंग के राजा जो दूसरे राजाओं के अभिमान को नष्ट करने वाले थे वे भी इससे डरते थे।

27. उसने पिष्टपुर नगर को, जो दुर्ग से युक्त था, अपनी विजय के द्वारा दुर्ग रहित बना दिया था। उसमें कलियुग के दुर्गुण प्रवेश तक नहीं कर सके थे।

28. कुनाल झील पुलकेशिन द्वारा विजित हुआ था। इसे सन्नद्ध हाथियों की घटाओं से युक्त और विविध प्रकार के घायल घावों से निकलनेवाले लाल रंग के रक्त रूपी अंगराग की तरह का जल बादलों से युक्त और संध्या काल के लाल आकाश-सा दिखाई देता था।

29. पुलकेशिन ने अर्जित तथा मौल आदि छः प्रकार के सैनिकों के सहयोग से, जो वीरता और उमंग से भरे हुए थे तथा लहराते हुए पताका, चंबर और छत्रों से आच्छादित थे, पल्लव राजा महेन्द्रवर्मन की सशक्त सेना को परास्त किया। उसने काञ्ची नगरी के प्रताप को उसकी चाहरदीवारी में, अपनी सेना के अभियान में उड़ाये गये धूलि के आच्छादन से, नजरबन्द कर दिया था।

30. कावेरी नदी का प्रवाह जो द्रुत गति से बहने के कारण मछली के चंचल नेत्रों की तरह अपने गति में अस्थिर था वह पुलकेशिन के मद चूते हुए हाथियों के सेतु से अपने प्रवाह के रुक जाने से समुद्र में पहुँचने के मार्ग में ही रुक गया।

31. पुलकेशिन सूर्य के समान था जिसके समक्ष पल्लवों की सेना ओस कण के समान थी तथा वही चोल, पाण्ड्य तथा केरल के राजाओं के पराजय के बाद इसके समृद्धि के हेतु हुआ। अर्थात् पल्लवों के पराजय के बाद चोल, पाण्ड्य, केरलों ने इसकी अधीनता स्वीकार कर लिया।

32. पुलकेशिन का नाम 'सत्याश्रय' था। उसमें उत्साहशक्ति, प्रभुशक्ति और मन्त्रशक्ति थी। उसने दिशाओं के राजाओं को जीतकर तथा उनको विदा करके तेजयुक्त देवताओं और ब्राह्मणों की पूजा करके दूसरी पृथ्वी के समान वातापी नगरी में प्रविष्ट होकर जो चंचल समुद्र के नीचे जल भरी हुई खाई से घिरी थी, शासन कर रहा था।

33. महाभारत युद्ध के 3735 वर्ष बाद

34. तथा कलियुग में शक शासकों के संवत् (शक संवत्) के 556 वर्ष बाद

35. तब पुलकेशिन जो सत्याश्रय नाम से विख्यात था तथा जिसका शासन तीनों समुद्र पर्यन्त था उसकी कृपापूर्ण सहायता से यह पत्थर का जैन मन्दिर अपने गौरव का प्रतीक स्वरूप रविकीर्ति ने बनवाया।

36. रविकीर्ति ने ही इस मन्दिर का निर्माण कराया तथा तीनों भुवन के स्वामी भगवान् जिन की इस प्रशस्ति को बनवाया था।

37. रविकीर्ति ने जो बुद्धिमान था अपने अर्थ विधान के लिए पत्थर का यह दृढ़ जैन मन्दिर बनवाया था तथा भारवी और कालिदास के यश को अपनी कविता द्वारा अर्जित किया था।

ऐतिहासिक महत्त्व

दक्षिणी भारत के बादामी जिले में अयहोल नामक एक गाँव है। उस गाँव में रविकीर्ति ने एक जैन मन्दिर का निर्माण कराया तथा इस मन्दिर की दीवार पर एक लेख भी उत्कीर्ण कराया। यह मन्दिर अयहोल ग्राम के मेंगुटी नामक क्षेत्र में बना है। यही स्थान था जहाँ जैन भिक्खु जैनेन्द्र रहता था। इस अभिलेख से पुलकेशिन द्वितीय के व्यक्तित्व तथा कृतित्व के सम्बन्ध में विस्तृत विवरण मिलता है। इसीसे इसे पुलकेशिन द्वितीय का अयहोल अभिलेख कहते हैं।

पुलकेशिन चालुक्य वंशीय शासक था। चालुक्य शासकों को उनकी स्थिति के अनुसार दो शाखाओं में विभिक्त किया जा सकता है—एक पूर्वी तथा दूसरे पश्चिमी शाखा के चालुक्य। पश्चिमी शाखा के राजाओं की राजधानी बादामी थी। इसका पुरातन नाम वाटपीपुर (वातापी) था। यह कथा प्रचलित है कि यही कहीं अगस्त ऋषि ने वातापी नामक राक्षस की हत्या की थी इसीसे इस स्थान

का नाम वातापी पड़ा जो पीछे वाटपीपुर तथा बादामी नाम से जाना जाने लगा। चालुक्यों की दूसरी शाखा जिसे पूर्वी चालुक्य कहते हैं आन्ध्रप्रदेश में शासन करती थी। इनकी राजधानी वेंगी थी। पर जहाँ तक इस अभिलेख का प्रश्न है यह पश्चिमी शाखा के चालुक्य वंश से संबंधित है।

इस अभिलेख का विषय है पुलकेशिन द्वितीय का लूट, उसकी विजय तथा उसके कार्य। इस अभिलेख में तिथि भी दी गई है। यद्यपि अन्य अभिलेखों की तरह इसकी तिथि स्पष्ट नहीं है। इसके 34वें श्लोक में शक संवत् 554 उल्लिखित है। इससे ज्ञात होता है कि यह शासक (554 + 78) 632 ई॰ में था।

यह अभिलेख शुद्ध संस्कृत में लिखा है। इसकी शैली काव्यगत है तथा शब्दावली एवं रचना साहित्यिक है। यह कवि संस्कृत साहित्य के इतिहास में भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। अलंकार शास्त्र के लिए यह विशेष प्रसिद्ध है। इसने कालिदास के रघुवंश तथा भारवी के किरातार्जुनीय से भावों और शैली को ग्रहण किया है। रघुवंश में रघु के विजय के सम्बन्ध में जो श्लोकों हैं उनमें से कुछ श्लोक यहाँ भी मिलते हैं। इसलिए यह अभिलेख जहाँ इतिहास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है वहीं साहित्य की दृष्टि से भी।

इसके अक्षर दक्षिण भारतीय प्रकार के चालुक्य शैली के हैं। इसमें कुछ, बहुत ही विशिष्ट चिह्नों का प्रयोग हुआ है जैसे जिह्वामूलयि। विसर्ग के स्थान यहाँ उपयधमानीय का प्रयोग हुआ है।

वर्ण विषय

यह अभिलेख जैन भिक्खु जैनेन्द्र की प्रार्थना के साथ प्रारम्भ होती है। इसमें चालुक्य वंश के प्रारम्भिक शासकों के सम्बन्ध में विवरण मिलता है। बल्लभ उपाधिकारी राजा जयसिंह इस वंश का आदि शासक था। इसके बाद इसका उत्तराधिकारी रणराज सिंहासनासीन हुआ। यह पश्चिमी विश्व का स्वामी कहा गया है। इसका पुत्र पुलकेशिन द्वितीय था। इसे लाक्षणिक रूप में वातापीपुर का स्वामी तथा देवीश्री का पति कहा गया है। इसने अवश्मेघ यज्ञ किया था। इसके बाद इसका लड़का गद्दी का उत्तराधिकारी बना। इसका नाम कीर्तिवर्मन था। इसकी प्रशंसा बड़े ही उच्च शब्दों में की गयी है। इसने दक्षिणी भारत में अनेक विजय किया था।

इसके विजयों का उल्लेख 9वें श्लोक में किया गया है, यथा—

नीलमौर्यकदम्बकालरात्रिस्तनयतस्य बभूव कीर्तिवर्मा।

परद्यर निवृत्ति चित्र वृत्तेरपि धीर्यस्य रिपुश्रियानुकृष्टा॥

इससे ज्ञात होता है कि इसने नल, मौर्य तथा कदम्बों को जीत लिया था। इनकी समता निम्न की जा सकती है

1. नल—इस परिवार की समता कलिंग तथा बरार में शासन करने वाले नल परिवार से की जा सकती है। ये दक्षिणी कोंकण के रहने वाले थे। यह स्थान वर्तमान बम्बई प्रेसिडेन्सी में है।

2. मौर्य—यह भी दक्षिणी भारत की एक जाति थी जो आज बम्बई प्रेसिडेन्सी के समुद्री तट पर रहती थी।

3. कदम्ब—ये बम्बई के धारवाड़ जिले के शासक थे। इनका शासन केन्द्र बनवासी था। कीर्तिवर्मन ने इन्हें पराजित किया था। इस समय कदम्ब शासक कृष्ण वर्मन द्वितीय पराजित हुआ था।

कीर्तिवर्मन के बाद इसका छोटा भाई मंगलेश गद्दी पर बैठा। यह बड़ा ही प्रतिभासम्पन्न शासक था। इसने भी बहुत विस्तृत विजय की थी। इसके विषय का वर्णन 11, 12 और 13वें श्लोक में मिलता है। इसमें वर्णित है कि मंगलेश ने पूर्वी और पश्चिमी घाट के बीच के प्रदेशों को जीत लिया था। इसके अतिरिक्त उत्तरी तथा मध्य भारत के कलचूरियों को भी इसने जीता। इसके अनुसार उस समय का कलचूरी शासक शंकरगण का पुत्र था जो मध्यप्रदेश के हैहय वंशीय राजाओं में प्रसिद्ध था। इसके बाद इसने रेवती को विजित किया जो आरकान घाट पर बसे थे जहाँ चालुक्य राजाओं के सिक्के बड़ी संख्या में प्राप्त हुए हैं। यह भी कहा जा सकता है पश्चिमी घाट पर यह एक छोटा-सा द्वीप था। इस सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि इस शासक ने मालवा तथा गुजरात को भी जीत लिया था जहाँ कलचूरी शासन रहे थे।

11वें श्लोक से ज्ञात होता है कि कीर्तिवर्मन का पुत्र पुलकेशिन द्वितीय अपने चाचा मंगलेश के सिंहासनारोहण के कारण राज्य छोड़कर जंगल में चला गया था। वहाँ से उसने पड़ोसी राज्यों से धीरे-धीरे शक्ति संचित किया और मंगलेश को पराभूत कर अपना यश बढ़ा लिया।

इसके बाद पुलकेशिन के राजनीतिक कार्यों का ज्ञान प्राप्त होता है। 17 से 24वें श्लोक में पुलकेशिन द्वितीय के राजनीतिक जीवन पर प्रकाश पड़ता है। इसने गोविन्द अप्यायिका नामक राजा को हराया तथा मैसूर प्रदेश के बनवासी के राजा को भी पराजित किया था। इसके बाद इसने कोंकण तथा मौर्य जाति के लोगों को पराजित किया। इसने लाट, मालव तथा गुजरात को भी जीता। इन राज्यों के राजाओं ने पुलकेशिन द्वितीय के सम्मुख अपना मस्तक झुका लिया था।

इस अभिलेख के 23वें श्लोक से हर्षवर्धन तथा पुलकेशिन द्वितीय के बीच युद्ध का विवरण दिया गया है। कन्नौज के शासक हर्षवर्द्धन ने अपनी स्थिति उत्तरी भारत में बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण बना लिया था। वह उत्तरी भारत के अधिकांश प्रदेशों को जीतने के पश्चात् दक्षिण की ओर विजय करने का निश्चय किया। पर वह इस आक्रमण में पराजित हुआ। उसकी यह पराजय विंध्य पर्वत में हुई थी। पुलकेशिन द्वितीय से पराजित होकर यह यहाँ लौटने के लिए बाध्य हुआ। यह युद्ध लगभग 630 ई॰ में हुआ था। दोनों दलों की सेनाओं को इस युद्ध में कठोर विपत्ति का सामना करना पड़ा था। यद्यपि हर्ष के पराजय का सीधा विवरण इस अभिलेख से नहीं मिलता परन्तु इसके वर्णन से अवश्य स्पष्ट होता है कि हर्ष की सेना इस अभियान में असफल रही तथा उसे पराजित होना पड़ा था।

पुनः पुलकेशिन ने कांची के पल्लवों को पराजित किया तथा कोशल और कलिंग को भी जीत लिया। इस प्रकार उसने सम्पूर्ण दक्षिणी भारत पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। यहाँ कोशल से अभिप्राय दक्षिणी कोशल से है। इसने वातापी को अपनी राजधानी बनाया तथा अपना नाम सत्याश्रय धारण किया। इसी के दरबारी कवि रविकीर्ति ने जैनेन्द्र का मन्दिर भी निर्मित कराया था।

हर्ष के पराजय की घटना उसके समय भारत में आए हुए चीनी यात्री ह्वेनसांग के विवरण से ज्ञात होती है। इन दोनों शासकों के बीच परस्पर युद्ध 630 ई॰ के लगभग हुआ होगा। पुलकेशिन 'दक्षिणापथ पृथीव्याः स्वामी' था। इसने अपना साम्राज्य महाकोशल तथा कलिंग तक फैला लिया था।

25वें श्लोक से ज्ञात होता है कि इसका अधिकार महाराष्ट्रिक पर भी हो चुका था। इस नगर में कुल 99 सहस्र गाँव थे। अपने विजय क्रम में पुलकेशिन इतने से ही सन्तुष्ट नहीं हुआ पर उसने पिष्टिपुर को भी जीत लिया। यह गोदावरी के तट पर स्थित था। यहाँ इसका अनुज विष्णुवर्धन शासन करता था। इसने वेंगी को केन्द्र बनाकर अपनी एक अलग राजधानी स्थापित कर चालुक्यों की एक दूसरी शाखा को स्थापित किया था। चोल शासकों ने भी इसकी अधीनता स्वीकार कर ली थी। इस प्रकार यह दक्षिणी भारत के पूर्वी तट पर पीठापुर के और दक्षिण तक विजय कर लिया था। कावेरी को पार कर और दक्षिण की और भी बढ़ा था। इधर यह केरल तथा पाण्ड्य प्रदेश तक गया। इन प्रदेशों के शासक पल्लवों का विरोध कर रहे थे। इस अभियान में पल्लवों ने भी पुलकेशिन द्वितीय को सहायता दी थी। डॉ॰ भण्डारकर के अनुसार पहले पल्लव पराजित हुए और पीछे चोल, केरल, पाण्ड्य आदि भी पुलकेशिन द्वितीय द्वारा जीत लिए गए। इस प्रकार दक्षिण में अपनी शक्ति बढ़ाकर वह वातापी नगर में प्रवेश किया तथा यहाँ अपनी राजधानी बनाया। इस राजा ने अपना नाम सत्याश्रय रखा। राजधानी स्थापित करने के बाद वहाँ इसने अनेक यज्ञ किया। पुलकेशिन के विजय की पुष्टि ह्वेनसांग भी करता है। वह इसे 'बुलेकिशे' नाम से सम्बोधित करता है तथा यह कहता है कि एक विजेता क्षत्रिय, आश्रयदाता एवं अनेक यज्ञों का कर्ता था। इसने अपना राज्य भी बहुत अधिक विस्तृत किया था।

इस प्रकार पुलकेशिन के दिग्विजय का वर्णन करने के बाद प्रशस्तिकार ने लिखा है कि तीर्थंकर जितेन्द्र का मण्डल रविकीर्ति ने बनाया था कि यह सत्याश्रय के अधीनस्त आश्रय प्राप्त कर चुका था। सत्याश्रय तीनों समुद्रों से घिरे हुए पृथ्वी का स्वामी था।

रविकीर्ति की तुलना कालिदास तथा भारवी से की गई है। इसकी काव्यगत कुशलता इन साहित्य शिरोमणियों की तरह रही है।

8. शशांक कालीन गंजाम ताम्रपत्र अभिलेख
(Ganjam Copper Plate Inscription of Sasanka)

स्थान : गंजाम, प्रांत उड़ीसा

भाषा : संस्कृत

लिपि : उत्तर भारतीय ब्राह्मी

काल : गु॰ सं॰ 300 (619 ई॰)

विषय : शशांक के समय के दान पत्र

सन्दर्भ : पाण्डेय, हि॰ ए॰ लि॰ इ॰, पृ॰ 147

मूल-पाठ
(प्रथम पत्र)

1. ओं स्वस्ति। चतुरुदधिसलिलवीचोमेखलानिलीनायां सद्वीपा—
2. गरपत्तनवत्या वसुंधरायां गौप्ताब्दे वर्षशतत्रये वर्त्तमाने
3. महाराजाधिराजश्रीशशांकराज्ये शासति गगनतल—
4. वनि[:] सतृभागीरथावतारितार्या हिमवद्गिरेरुपरि—